Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 30-05-2021, Accepted: 14-06-2021, Published: 29-06-2021
Volume 2, Issue 1, 2021, Page No. 24-37

हिन्दी-कहानी की आंचलिकता और कहानीकार बलवन्त सिंह

डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा
डी. लिट., अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, आर.एस.एम. महाविद्यालय, धामपुर, जिला- बिजनौर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

हिन्दी कथा-साहित्य में आंचलिकता की प्रवृत्ति नयी कहानी-आन्दोलन से प्रविष्ट हुई है तथा फणीश्वरनाथ रेणु, शिव प्रसाद सिंह एवं मार्कण्डेय, जिन्हें ग्रामांचल के कथाकार कहा जाता है, इसके प्रवर्तक कथाकार हैं, एवं शैलेश मटियानी, लक्ष्मी नारायण लाल, राजेन्द्र अवस्थी, मधुकर गंगाधर, केशव प्रसाद मिश्र, शेखर जोशी, ओंकारनाथ श्री वास्तव, हिमांशु जोशी आदि भी इसी श्रेणी के कथाकार हैं। ऐसी अधिकांश लोगों की अवधारणा रही है, परन्तु नयी कहानी के सशक्त आलोचक डॉ. सुरेश सिन्हा के मत में बलवन्त सिंह हिन्दी के प्रथम आंचलिक कहानीकार है, जिन्हें केवल उर्दू का कहानीकार मानकर साहित्य-समीक्षकों ने उनकी हिन्दी-कहानी की उपेक्षा ही की है। इस लेख में इस तथ्य को दृष्टिगत कर उनके समृद्ध हिन्दी कहानी-साहित्य का मूल्यांकन करते हुए उनकी उत्कृष्ट कहानी-कला एवं उनमें आंचलिकता की प्रवृत्ति का यथोचित समीक्षण करने का एक प्रयास किया गया है ताकि पंजाबवासी इस लेखक के हिन्दी-कहानीकार रूप को भी साहित्यानुरागियों के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके। वस्तुतः ये ऐसे हिन्दी कहानीकार हैं, जिन्होंने अपनी कहानियों में क्षेत्र-विशेष (पंजाब) की सच्ची तस्वीर अंकित कर अपने पाठकों को उससे रू-ब-रू करने में अग्रणी भूमिका अदा की है।

मूल शब्द: आंचलिकता, कहानीकार बलवन्त सिंह, प्रतिनिधि कहानियाँ, कहानी-रचना-विधान एवं उनका आंचलिक स्वरूप ।

प्रस्तावना

कथा-साहित्य (कहानी-उपन्यास) में प्रचलित आंचलिकता की प्रवृत्ति आधुनिक है और नयी कहानी-आन्दोलन से प्रविष्ट हुई है। नयी कहानी की यह प्रवृत्तिगत विशेषता मानी जाती है, अधिकतर समीक्षकों एवं साहित्येतिहास-लेखकों की ऐसी अवधारणा रही है कि आंचलिक साहित्य-लेखन नयी कहानी आन्दोलन का ही एक हिस्सा है। डॉ. विवेकी राय के शब्दों में- "नयी कहानी वस्तुतः ग्राम जीवन की पुनर्प्रतिष्ठा का आन्दोलन था। आरम्भ की अधिकांश जीवन्त नयी कहानियाँ ग्राम जीवन या आंचलिकता से जुड़ी थी।"[1] वास्तव में इससे पूर्व ऐसा कोई रचनाकार अपनी किसी भी कृति में विशुद्ध आंचलिकता का सन्निवेश नहीं कर सका है। कथा-सम्राट मुंशी प्रेमचन्द ही एक ऐसा नाम है, जिनकी कथा-रचनाओं-उपन्यास एवं कहानी-में पूर्ववर्त्ती एवं समकालीनों से भी अधिक आंचलिकता विद्यमान है चूँकि गाँव एवं कस्बों की जिन्दगी एवं परिवेश के जीवन्त चित्र उनमें विद्यमान है, लेकिन वे भी विशुद्ध आंचलिक कृतियों की श्रेणी में नहीं रखी जा

सकतीं क्योंकि उनमें अंचल के जीवन को समग्र रूप से चित्रित नहीं किया गया है। यद्यपि शिवपूजन सहाय एवं वैद्यनाथ मिश्र 'नागार्जुन' जैसे मूर्धन्य साहित्यकारों ने आंचलिकता पर आधारित उपन्यास लिखकर इस क्षेत्र में पदार्पण कर दिया था, पर आंचलिक उपन्यासों के जन्मदाता रेणु ही माने जाते हैं। उन्होंने 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' लिखकर आंचलिक उपन्यासों के क्षेत्र में क्रान्ति ही मचा दी। उन्हीं के क्रम में आंचलिक कथाकार के रूप में शिव प्रसाद सिंह एवं मार्कण्डेय के नाम आदर के साथ लिये जाते हैं।

अतः कथा-साहित्य में आंचलिकता को प्रतिष्ठित करने का श्रेय फणीश्वर नाथ रेणु, शिव प्रसाद सिंह, मार्कण्डेय को ही विशेष रूप से प्राप्त है, ये तीनों ऐसे कथाकार हैं, जिनकी कहानियों में पहली बार गाँव की मिट्टी की जो सौंधी महक एवं गाँव के लोगों का जीवट देखने को मिला, वह इनसे पहले किसी कथाकार की कथात्मक कृतियों में नहीं है चूँकि इन्होंने ही गाँव के परिपार्श्व को सम्पूर्ण रूप से चित्रित किया है। इतने पर भी इनके चित्रण में रोमांटिकता है, जिसका उल्लेख सुधी-समीक्षकों ने भी किया है। डॉ. बच्चन सिंह ने कहा है--"इन लेखकों ने गाँव के जो चित्र या चरित्र प्रस्तुत किये, वे मूलतः रोमैंटिक थे। ये लेखक स्वयं गाँव से शहर आ गये थे। इसलिए छूटे गाँव की यादों का रूमानियत से भर उठना स्वाभाविक था।"[2] लेकिन यह सर्वसम्मत मान्यता बन चुकी है कि गाँव का चित्रण करने वाले कथाकार ग्रामांचल के कथाकार कहे जाते हैं क्योंकि गाँव की वास्तविक तस्वीर इनकी ही कथाकृतियों में देखने को मिलती है, साथ ही शैलेश मटियानी, लक्ष्मी नारायण लाल, राजेन्द्र अवस्थी, हिमांशु जोशी, मधुकर गंगाधर, केशव प्रसाद मिश्र, शेखर जोशी, ओंकार नाथ श्रीवास्तव आदि के नाम भी आंचलिक कहानीकारों में सम्मान के साथ लिये जाते हैं। इन सभी ने अंचल विशेष से सामग्री लेकर हिन्दी-कहानी के आंचलिक स्वरूप को स्थापित करने एवं सँवारने में महती भूमिका अदा की है। इनकी कहानियों में प्रायः ग्रामीण जन-जीवन एवं परिवेश आदि के चित्रण हुए हैं, अतः यह धारणा भी बन चुकी थी कि ग्रामांचल को चित्रित करने वाला साहित्य ही आंचलिक कथा-साहित्य कहा जाता है, जैसा कि इस कथन से प्रमाणित होता है–"स्वातन्त्र्योत्तर भारत के ग्रामीण जन-जीवन को स्थानीय शैली में उन्हीं के भाषा-रूपों के साथ चित्रित करने वाला कथा-साहित्य इस कोटि में आता है।"[3] आज व्यापक सन्दर्भ में इस धारणा से सहमत होना सम्भव नहीं है। आज तो अंचल अर्थात् क्षेत्र-विशेष के सम्पूर्ण चित्र को अंकित करने वाली रचना आंचलिक कथा-कृति-उपन्यास या कहानी- को उक्त संज्ञा से अभिहित किया जाना अधिक तर्कसंगत होगा। अंचल ग्राम, नगर, जनपद एवं प्रदेश या प्रान्त में से कोई भी हो सकता है, जिसका चित्रांकन करने में भाषा पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। 'कथाकारों एवं कथा-साहित्य के समीक्षकों का विचार है कि आंचलिक कहानी, उपन्यास अथवा साहित्य की भाषा वही हो जिस भाषा का वह साहित्य कहलाना चाहता है। हिन्दी आंचलिक कहानी की भाषा हिन्दी हो। क्षेत्रीय प्रचलित शब्द उसी सीमा तक मान्य हैं, जहाँ तक भाषा अनगढ़ और अग्राह्य प्रतीत न हो।'[4]

अध्ययन क्षेत्रः- (आंचलिकता एवं कहानीकार बलवन्त सिंह)

ध्यातव्य है कि आज तक किसी भी साहित्य-लेखक, चाहे वह इतिहासकार हो, समीक्षक या कृतिकार हो, ने वर्णित आंचलिक कथाकारों की श्रेणी में उस नाम को सम्मिलित नहीं किया, जिसने आंचलिकता की प्रवृत्ति को अपनी कथात्मक सर्जनाओं में अत्यन्त आत्मीयता एवं स्वानुभूति से साकार रूप प्रदान किया है। केवल एक समीक्षक ने ही उनकी ओर ईमानदारी से ध्यान देते हुए उनकी कहानियों की आंचलिकता की दृष्टि से भलीभांति समीक्षा की है। नयी कहानी के सशक्त

समालोचक डॉ. सुरेश सिन्हा ने बलवंत सिंह की कहानियों को इस परिधि में रखकर कहा है–"बलवंत सिंह उचित अर्थों में हिन्दी के पहले आंचलिक कथाकार हैं। पंजाब के निम्न मध्यवर्ग के जीवन को लेकर वहाँ के लोकजीवन, लोकगीतों, आचार-व्यवहार एवं संस्कृति को अपनी कहानियों में यथार्थ ढंग से उभारने का प्रयास बलवन्त सिंह ने बड़ी सफलता से किया है। उनकी कहानियाँ स्थानीय परिवेश और करमट में डूबी होने के बाबजूद व्यापक आयामों को स्पर्श करती है और सर्वजनीन बन जाती हैं।"[5]

इस दृष्टि से बलवन्त सिंह एवं उनकी कहानियों की चर्चा आवश्यक है। पंजाब के गुजराँवाला (अब पाकिस्तान में) में जून 1921 ई. जन्मे वे 1947 ई. में देश-विभाजन के पश्चात् भारत आ गये। उन्होंने हिन्दी और उर्दू दोनों ही भाषाओं में अनेक उत्कृष्ट रचनाएँ की, परन्तु उनके विरोधी उन्हें उर्दू का ही कहानीकार मानते रहे, जिससे उनकी हिन्दी में विरचित कहानियों का उचित मूल्यांकन नहीं हुआ जबकि उन्होंने भारत आकर राष्ट्रभाषा हिन्दी के महत्त्व को अंगीकार कर हिन्दी में ही सैकड़ों उत्कृष्ट कहानियाँ लिखकर हिन्दी कहानी-साहित्य को समृद्ध करने के साथ-साथ उसके विकास की गति में अपना सराहनीय योगदान दिया है। कहानियों में कलात्मकता एवं शिल्प-विधान को देखकर कहा जा सकता है कि वे कहानी-लेखन के कुशल कलाकार हैं। इतने पर भी उनकी कहानियाँ सादगी एवं सरलता बनाये हुए पाठकों के चित्त को आकर्षित कर उनका मनोरंजन करने के साथ-साथ किसी विशिष्ट लक्ष्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। पंजाब में लम्बे समय तक रहकर उसके जीवनादि को अपने मन एवं चेतना में आत्मसात् करके उन्होंने पंजाब के निम्न मध्यवर्गीय जीवन, लोक-जीवन, लोकगीतों, आचार-व्यवहार, संस्कृति-सभ्यता आदि सभी का यथार्थ अंकन अपनी अनेक कहानियों में अत्यन्त प्रभावी ढंग से किया है, जो प्रत्येक पाठक के सामने इसलिए साकार हो उठता है चूँकि वह लेखक की स्वानुभूति एवं संवेदना से निःसृत है। यही कारण है कि कहानियों में आंचलिकता भी आरोपित न होकर सहज एवं स्वाभाविक रूप में अनुस्यूत प्रतीत होती है। वे समय एवं समाज के प्रति सजग रहते हुए कहानी-लेखन में सक्रिय रहे हैं, अतः उन्हें प्रगतिशील कहानीकार कहा जाता है। डॉ. सुरेश सिन्हा के शब्दों में–"उनकी कहानियों के पात्र मानव-जीवन के बहुरंगी पक्षों को स्पर्श करते हुए अपूर्व जिजीविषा से भरपूर हैं। वे जीवन जीने के हिमायती हैं, जीवन से पलायन करने के नहीं। इसीलिए उनकी कहानियों में सामाजिक जबावदेही पूरे तौर पर प्रतिध्वनित होती है। नवीन मूल्यों के प्रति आग्रह एवं विश्वास उनकी इधर की कहानियों में मूल स्वर हैं।"[6] इस दृष्टि से उनकी 'गलियाँ' कहानी विशेष उल्लेखनीय है, जिसमें उनका नवीन वैचारिक स्तर स्पष्ट होने से सर्वाधिक उत्कृष्टता परिलक्षित होती है। वैसे उनकी कहानियाँ अपनी-अपनी महत्ता रखती है, जिनमें 'समझौता', 'दीमक', 'पंजाब का अलबेला', 'जग्गा', 'तीन बातें', 'ग्रन्थी', 'खुद्दारी', 'लम्हे', 'पहला पत्थर', 'नया मकान', 'अपरिचित', 'मैं जरूर रोऊंगी', 'प्रतिध्वनि', 'पेपरवेट', 'बाँध', 'काको के प्रेमी', 'देवता का जन्म' आदि की चर्चा प्रायः की जाती रही है। उनका समृद्ध कहानी-साहित्य 'पंजाब की कहानियाँ', 'चिलमन', 'पहला पत्थर', 'मेरी प्रिय कहानियाँ', 'देवता का जहन्नुम', 'प्रतिनिधि कहानियाँ', 'वन-वास तथा अन्य कहानियाँ', 'अली-अली', 'मेरी तैंतीस कहानियाँ', 'मैं जरूर रोऊँगी' आदि कहानी- संग्रहों में संकलित कर प्रकाशित किया जा चुका है। राजकमल प्रकाशन के द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में उनकी हिन्दी कहानियाँ भी प्रकाशित हो चुकी हैं। अतः उन्हें केवल उर्दू का कहानीकार कहकर हिन्दी कहानीकारों की श्रेणी से पृथक् करना न्यायोचित नहीं है। आंचलिकता से समन्वित होने से उनकी कहानियाँ आंचलिक कहानियों में सर्वथा अग्रगण्य ही रहेंगी क्योंकि उनका कथ्य एवं शिल्प भी

उत्कृष्ट कोटि का है। वस्तुतः उन्होंने अपने रचनात्मक गुणों से उर्दू गल्प को तो विश्वीय पहचान देने में अहम भूमिका अदा की ही है[7] साथ ही हिन्दी-कहानी के लिए भी उनके योगदान को भी किसी प्रकार कम करके नहीं आँका जाना चाहिए। आंचलिकता पर आधारित उनकी अनेक कहानियाँ पाठकों के चित्त को तदनुरूप अनुभूति कराते हुए अत्यन्त लोकप्रिय हो चुकी हैं। लब्धप्रतिष्ठ महिला कहानीकार कृष्णा सोबती द्वारा सम्पादित 'प्रतिनिधि कहानियाँ' इस दृष्टि से विशेष विचारणीय हैं। इन कहानियों में कतिपय कहानियाँ तो छोटी हैं, कुछ लम्बी और कुछ आधुनिक लघुकथा का सा आभास देती हैं।

'ग्रन्थी' नामक कहानी का कथ्य चक नं 35 एवं 36 के संयुक्त गुरुद्वारे के ग्रन्थी पर आधारित है। वे गुरुद्वारे का सम्पूर्ण कार्य ईमानदारी से करते हुए अपनी पत्नी एवं छोटी बच्ची के साथ गुरुद्वारे में रहते है, परन्तु लोगों के मन-मुताविक काम न करने के कारण लाजो नाम की विधवा के द्वारा लगाये गये झूठे अभियोग में पंचायत द्वारा जानबूझकर आरोप सिद्ध किये जाने पर गुरुद्वारे से निष्कासित किये जाने से वे अत्यधिक परेशान हो जाते हैं, परन्तु सरदार बन्ता सिंह, जो किसी औरत के भगाने के अभियोग में डेढ़ वर्ष का कारावास भुगतकर आये है, के पंचायत वालों को धमकाने एवं उनसे निपटने का एलान करने पर उनकी धाक से ही गुरुद्वारे से जाने से बच जाते हैं। वन्ता सिंह के डर के कारण गाँव वाले ग्रन्थी पर इल्जाम न लगाकर लाजो को ही बुरा-भला कहते हैं, जिससे ग्रन्थी आरोप-मुक्त भी हो जाते हैं। इस कहानी में कहानीकार सामाजिक जीवन में षडयन्त्र के रूप एवं परिणाम के साथ गुरुद्वारे के दृश्य, गाँव के परिवेश, प्रकृति, वहाँ के निवासी किशोरों की अठखेलियों, स्त्रियों की वेशभूषा आदि का भी यथार्थ अंकन कर क्षेत्र-विशेष का रूप पाठकों की आँखों के सामने लाने में भी सफल रहा है। कहानी अपने इस उद्देश्य में भी सफल रही है कि किसी गरीब एवं दीनहीन व्यक्ति के प्रति अन्याय या अत्याचार न हो। कहानी के पात्र वन्ता सिंह के ही शब्दों में लेखक का यह प्रयास और अधिक प्रभावी हो गया- "यह उसके बाप का घर नहीं है। यह गुरु का घर है। यहाँ किसी गरीब के साथ अन्याय नहीं हो सकता।"[8] वस्तुतः यह लेखक की प्रगतिशील सोच को ही प्रदर्शित करता है।

इसी क्रम में कहानी 'पहला पत्थर' है, जिसमें पूर्वी पंजाब में जालन्धर स्थित सरदार बधावा सिंह की विशाल हवेली एवं उसके आस-पास की घटना का वर्णन है। इस हवेली को बाजसिंह उर्फ बाज़ और उसके चेले - चाँटे शाही अस्तबल के नाम से भी पुकारते थे। यहाँ भीमकाय सरदार बधावा सिंह, उनकी बड़ी सरदारिन, छोटी सरदारिन तथा लेबिल प्रिंटिंग प्रेस एवं नानक फर्नीचर मार्ट और उनमें कार्यरत कर्मचारी भी रहते थे, जिनका उस्ताद बाजसिंह था। सन् 1947 के आरम्भ में पश्चिमी पंजाब में मुसलमान भाईयों द्वारा अपने कराड़ और सिक्ख भाइयों का नाका बन्द कर दिये जाने पर शरणार्थियों की एक बड़ी संख्या पूर्वी पंजाब में आ गयी थी। उन्हीं में से मूल सिंह अपनी पत्नी के मुसलमानों द्वारा मार दिये जाने पर अपनी तीन पुत्रियों घुक्की, निक्की एवं साँवली के साथ आया था, जिसे सरदार वधावा सिंह ने पास की दुकान एवं मकान किराये पर दे दी और वह पंसारी की दुकान करने लगा। उसी की इन तीन पुत्रियों के चरित्र, चाल-चलन तथा उनके प्रति लोगों के वासनामय एवं गलत दृष्टिकोण को लेकर यह सम्पूर्ण कहानी रची गयी। इसके साथ ही बड़ी सरदारिन एवं छोटी सरदारिन की हँसी-ठिठोली, उनके चरित्र एवं व्यवहार का भी वर्णन है। अन्य सभी पात्रों के क्रियाकलाप एवं व्यवहार भी इन्हीं सब के इर्द-गिर्द दर्शनीय हैं।

सुन्दर घुक्की को पैतालीस वर्ष का बाजसिंह भी छेड़ता है, परन्तु वह सरदार वधावा सिंह के पास आये उसके हिन्दू दोस्त रिटायर्ड पुलिस अफसर के साथ आने वाले

नवयुवक चमन के प्रेमजाल में फँसकर उससे विवाह करना चाहती है, पर चमन के धोखा देने से उसका विवाह किसी ऐसे युवक से हो जाता है, जो मनोनुकूल न होने से उसके जीवन को निराशापूर्ण एवं दुःखद बना देता है। उसी की छोटी बहिन निक्की है, जिसे भी बाजसिंह एवं अन्य लोग छेड़ते हैं, छींटाकशी करते हैं तथा परेशान करते हैं, वह भी प्रेस में लेबिल छापने वाले जलकुकड़ नाम के चौतीस वर्षीय व्यक्ति, जो दो बच्चों का बाप था, से गर्भवती होकर मौसी के साथ चली जाती है और कुएँ में छलांग लगा देती है, सन्तान तो मर जाती है, पर वह बच जाती है। तीसरी छोटी बहिन साँवली, जो नेत्रहीना है, भी भावुकतावश कुलदीप से प्रेम कर विवाहपूर्व ही गर्भवती हो जाती है।

इस प्रकार समाज में सभी लोग पाप और व्यभिचार करते देखे जाते हैं। अतः दूसरे को दोष देकर उसे अपराध का दण्ड देना न्यायोचित नहीं है। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं, जो पूर्णतः निष्पाप एवं निरपराध हो, अतः किसी को भी स्त्री के व्यभिचार करने के दण्डस्वरूप उसे पहला पत्थर मारने अर्थात् दण्ड देने का अधिकार नहीं है। कहानीकार ने इसी बात को लेकर कहानी की सर्जना की है और अन्ततः वह अपने उद्देश्य में सफल रहा है। उसने पात्र बाजसिंह, जिसके स्वभाव में बदलाव आ चुका है, के माध्यम से अत्यन्त सहज ढंग से अभिव्यक्ति देकर कहानी को सोद्देश्य बना दिया है-

अब कुछ देर शान्त रहने के बाद वह (बाजसिंह) सिपाहियों के से अंदाज में सीधा खड़ा हो गया और एक-एक शब्द पर जोर देकर बोला, "पर ..... मैं सोचता हूँ कि मुसलमान गुस्से में आकर व्याकूफी कर रहे हैं, वही व्याकूफी हम भले-चंगे अपनी बहिनों और बहू-बेटियों के साथ कर रहे हैं। बताओ, मुसलमानों को दोष देने से पहले हमें खुद को नहीं सरम आनी चाहिए!"

महफिल पर सन्नाटा छा गया।

नन्हें से दीपक की पतली-सी थरथराती लौ के मन्द प्रकाश में बाज ने अपनी मोटी तथा लम्बी उंगली उठाते हुए बात जारी रखी, ऐसे ही पाकिस्तान में घुक्की, निक्की और साँवली की हजारों बहिनें होंगी। तो फिर सवाल यह उठता है कि हम या वे किस इज्जत के लिए लड़ रहे हैं? क्यों एक-दूसरे को जंगली कहते हैं?....."[9]

कहानी का मुख्य सार तो यही है, जिसे लेखक ने विभिन्न पात्रों के चरित्र के साँचे में ढालकर अत्यन्त रोचक एवं स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त किया है। इस कहानी में पात्रों के बीच चुहुलबाजी, कानाफूसी, छींटाकशी, बड़ी सरदारिन एवं बाजसिंह के बीच हँसी-मजाक, छोटी सरदारिन, जो सरदार जी की व्याहता नहीं थी, की चाल-ढाल, रसपूर्ण क्रिया-कलाप, लड़के-लड़कियों को साथ लेकर महफिल सजाना, हँसी-ठिठोली आदि का संयोजन कर लेखक ने सरसता एवं प्रभावात्मकता का भी अच्छा संचार कर दिया है। यह कहानी स्वतन्त्रता के समय होने वाले सन् 1947 के हिन्दू-मुस्लिम- दंगे की भयावहता के परिदृश्य को भी साकार करने में सफल रही है। उस समय में स्त्रियों एवं कन्याओं के प्रति किये गये दुराचार एवं क्रूरता की वास्तविकता की झलक दिखाती हुई यह कहानी लेखक के मानवतावादी दृष्टिकोण का भी अच्छा परिचय देती है। वह हिन्दू या मुस्लिम के पक्ष की बात नहीं करता, बल्कि सच्चे इंसान की तरह सबको कार्य करते देखना चाहता है।

इस लम्बी कहानी में कहानीकार पात्र, परिवेश, पात्रों के बीच संवाद एवं उनके आचार-व्यवहार, उनकी वेश-भूषा, चाल-ढाल, खान-पान, प्रवृत्ति, रसपूर्ण वात्ताएँ आदि को सहजता के साथ प्रस्तुत कर क्षेत्र-विशेष अर्थात् पंजाब के गाँव की यथार्थ झलक दिखलाने में भी पूर्ण सफल रहा है, जिससे इसमें आंचलिकता की वास्तविक प्रतीति होती है। यह भी पूर्णतःसत्य है कि आजादी की त्रासदी का सर्वाधिक दुष्प्रभाव पंजाब पर ही हुआ। स्त्रियाँ तो

सर्वाधक पीड़ित हुई उनकी इज्जत तो गयी ही, मृत्यु का कष्ट भी उन्होंने भोगा। घुक्की, निक्की एवं साँवली की माँ की घटना यही बताती है। एक माँ के अभाव में तीनों कन्याओं का जीवन भी प्रभावित हुआ। इस प्रकार इस कहानी में लेखक नारी के प्रति सजग दृष्टिकोण रखकर उसकी दुर्दशा से भी पाठकों की संवेदना को झकझोरने में सफल रहा है। इस सन्दर्भ में उसके ये शब्द विचारणीय हैं-

"पंजाब बरवाद हो रहा था- वारिस शाह का पंजाब, गेहूँ के सुनहरे, गुच्छों वाला पंजाब, मद भरे गीतों वाला पंजाब, हीर का पंजाब, कूँजों और रहटों वाला पंजाब और उसकी एक निस्तेज आँखों वाली निरीह बेटी भी बरवाद हो रही थी।"[10]

वास्तव में पंजाब की धरती से जुड़ी यह कहानी अपनी कलात्मकता एवं आंचलिकता के कारण कहानी-सर्जक की उत्कृष्ट रचना-कुशलता का परिचय देती है। इसमें बलवन्त सिंह ने विभिन्न पात्रों की मनोदशाओं का चित्रण मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। खास बात यह है कि वे बाजसिंह जैसे पात्र की आँखों से वासना का चश्मा उतारकर विशुद्ध प्रेम को खुली आँखों से दिखाने में सक्षम रहे हैं। इस सम्पूर्ण कहानी को पढ़कर कहीं ऐसा नहीं लगता कि कहानीकार वास्तविकता से हटकर कुछ कह रहा है। उस समय के समाज को समझने के लिए भी यह कहानी अपने आप में अद्‌वितीय है।

'तीन बातें' कहानी मुख्यतः खेलसिंह नामक सिक्ख युवक के जीवन पर आधारित है, जो लूटपाट का कार्य छोड़कर सेना में भर्ती होने का निर्णय लेता है। वह अपनी प्रेमिका अमर कौर और माँ के समझाने पर अपने गाँव से शहर लाहौर में आकर गुरुद्‌वारा डेरा साहब में रहते हुए काम की तलाश करता है। गुरुद्‌वारे में रहते हुए भी उसका स्वभाव उस पर हावी रहता है, एक बार तो कम प्रसाद मिलने पर वह प्रसाद बाँटने वाले से ही झगड़ गया, जिससे प्रसाद-वितरक भी उससे नाराज़ हो जाते हैं, परन्तु कुछ देर बाद ज्ञानी जी एक बड़े दोने में पाव-डेढ़-पाव हलवा डालकर दे जाते है, जिससे वह आश्चर्य चकित हो जाता है। इसके बाद हलवा खाकर और लस्सी पीकर जब वह हरनाम सिंह के कहे अनुसार सरदार बुद्ध सिंह टिंबर मर्चेन्ट की दुकान पर काम माँगता है, तो वे अपने पुराने नौकर के वापस आने की बात कहकर उसे अपने यहाँ नहीं रख पाते। एक दिन वह घूमते-घूमते शाही मुहल्ले की धर्मशाला पहुँच जाता है, जहाँ उसकी मुलाकात ग्रन्थी से होती है, जिसके साथ वह दिन में अपना समय व्यतीत करने लगा। फिर ग्रन्थी से विदा लेकर जब वह अनारकली में नीला गुंबद पहुँचकर विभिन्न प्रकार के चित्रों के बीच एक ऐसे चित्र को देखता है जिसके नीचे लिखा था- "जापानी चूहे हैं, इन्हें मार भगाओ,"[11]

परन्तु वह इस चित्र के आशय को समझ नहीं पाता और इसी बीच उसका एक पुराना दोस्त हर्षा सिंह मिल जाता है जो डाके डालने का कार्य करता है, एक बार उसके मन में पुनः इसी कार्य के प्रति रुचि जगती है, परन्तु अमर कौर एवं माँ की भी बात स्मरण करता है और इसी उधेड़-बुन में वह उस बाग में पहुँच जाता है, जहाँ बहुत सारे लोगों के बीच पहुँचकर वह विचारों में उलझा हुआ 'इंडियन आर्म्ड कोर' का बोर्ड, रेडियो की उद्‌घोषणाएँ, तख्ते पर अंकित चित्र आदि को समझने में असमर्थ होता है और उसे निराशा ही हाथ लगती है, पर जब वह भूख के कारण गुरुद्‌वारे में लंगर में जल्दी पहुँचने हेतु बाग के फाटक से बाहर निकलने लगता है, तो उसकी निगाह फाटक पर बने फौजी सिक्ख की तस्वीर पर जाती है, जो अपने दूसरे हाथ की उंगली से एक हाथ की उठी हुई तीन उंगलियों की ओर इशारा कर रहा था और उसी तस्वीर में नीचे तीन बातें लिखी थी- अच्छी खुराक, अच्छी तनख्वाह, जल्दी तरक्की।[12] इन्हें देखकर वह भरती के दफ्तर की ओर चल देता है अर्थात् वह काम की तलाश में निकला था, जो उसे आज मिल गया।

यह कहानी यह संकेत करती है कि यदि व्यक्ति बुरे काम को छोड़कर अच्छे कार्य की तरह बढ़ने का प्रण कर ले, तो परेशानियाँ भले ही आयें, पर सफलता उसे अवश्य मिलती है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी प्रकार का गलत काम नहीं करना चाहिए। इसका एक पक्ष यह भी है कि समाज में सभी को यदि भर पेट भोजन, आवश्यकतानुसार धन एवं जीवन में आगे बढ़ने का मौका मिल जाए, तो वह गलत काम करेगा ही नहीं। इससे लेखक की प्रगतिवादी सोच का भी पता चलता है। वह चाहता है कि समाज के हर व्यक्ति खासकर नवयुवक को कार्य का अवसर मिले ताकि वह गलत रास्ते पर जाने से अपने-आप को रोक सके। इसी से समाज का समग्र विकास सम्भव हो सकता है। इस कहानी के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 'बलवन्त सिंह प्रगतिशील कहानीकार हैं। उन्होंने कभी जागरुक सामाजिक परम्परा से अपना सम्बन्ध विच्छिन्न नहीं किया और सदैव सोद्देश्य कहानी लिखते रहे।"[13]

जहाँ तक कहानी में आंचलिकता की बात है, वह परिवेश, पात्र, क्रिया-कलाप, आदि में पूर्णतः परिलक्षित होती है। गुरुद्वारे का वातावरण, लाहौर शहर की स्थिति, पंजाब के लोगों का खान-पान, वेश-भूषा, फौज में भरती होने की रुचि-विशेष, वीरतापूर्ण कार्य, तत्कालीन स्थितियों के अनुरूप उनका डकैती जैसे कुकृत्य करना आदि सभी कुछ कहानीकार ने स्वानुभूति एवं संवेदना से यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किये हैं, जो पंजाब की भूमि को पाठकों के सामने लाने में पूर्णतः सक्षम हैं। कहीं-कहीं पंजाबी भाषा एवं जुबान की झलक भी देखने को मिल जाती है।

'सूरमा सिंह' कहानी में लेखक ने सरदार मनजीत सिंह, जिन्हें अन्धा होने के कारण सिक्खों में सूरमा सिंह कहा जाता था, के चरित्र एवं स्वभाव को बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से अभिव्यक्ति दी है, जिसमें उनकी मानसिक स्थिति एवं दमित प्रेम-भावना को भी सहज ढंग से प्रस्तुत करने में कहानीकार अत्यन्त सफल रहा है। कहानी के अन्त में कहानी-लेखक के शब्द भी इस दृष्टि से विचारणीय है- "औरत की आवाज में ऐसी हमदर्दी, नम्रता और मिठास थी कि सूरमा सिंह के असीम अँधेरे संसार में वह आवाज़ चाँदी से चमकते हुए तार की-सी पगडंडी बनाती चली गई.....ऐसी पगडंडी, जो सूरमा सिंह को उसकी मंजिल तक पहुँचती दिखाई देती थी।"[14]

यह कहानी समाज के ऐसे लोगों को भी सामने लाती है, जिन्हें सीधे-सादे लोगों विशेषकर विकलांगों या नेत्रहीनों के प्रति हंसी-मजाक करने, छेड़ने या उन्हें परेशान करने या परेशान होते देखने में खुशी या प्रसन्नता की अनुभूति होती है। वस्तुतः यह व्यवहार मानवता की दृष्टि से उचित नहीं है, समाज का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे लोगों की सहायता करे और उनके प्रति सहानुभूति रखते हुए उनका उचित मार्गदर्शन करें। आंचलिकता की दृष्टि से इस कहानी में सूरमा सिंह की वेश-भूषा, गुरुद्वारे एवं उसके आसपास का परिवेश, ग्रन्थी की वेश-भूषा, उनका व्यवहार, निहंगों का कार्य-व्यवहार, उनके द्वारा लंगर तैयार किया जाना, गुरुद्वारे के मुसाफिर खाने में औषधि बेचने वाले सरदारों के क्रिया-कलाप, मुसाफिर खाने का समग्र वातावरण, टट्टुओं का अड्डा, खच्चरों के कारवाँ का आना-जाना आदि का यथार्थपरक वर्णन देखने लायक है। कहानी के पात्रों की भाषिक अभिव्यक्तियाँ भी क्षेत्र-विशेष के वातावरण को साकार करने वाली हैं। स्थिति-विशेष का अंकन भी जहाँ परिवेश की वास्तविकता से परिचित कराता है, वहीं कहानी के मुख्य पात्र सूरमा सिंह की स्वभावगत विशेषता को मनोवैज्ञानिक धरातल पर प्रस्तुत कर पाठकों के चित्त में एक विशेष मनोदशा की स्पष्ट झाँकी प्रदर्शित करने में सक्षम है। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण निहंगों के इस कथन में देखा जा सकता है- "अजी सूरमा सिंह इस मामले में बड़ा घाघ है। मेरे कहने का विश्वास न हो, तो देर-सबेर

चुपके से देखो कि सूरमा क्या कर रहे हैं। सेहन में औरतें धूप खाने को बैठती हैं, तो वह भी सरककर उनमें जा घुसता है। क्यों सूरमा सिंह! आखिर तुझे औरतों की बातों में क्या मजा आता है?" सेहन की दूसरी तरफ के कोने की ओर सूरमा सिंह महाराज की ख़ास नजर रहती है। वहीं औरतें कपड़े धोने के लिए बैठी रहती है। ऐसे मौकों पर भी उनके आसपास मंडराते रहते हैं। कभी किसी से छू जाते हैं, कभी किसी पर गिर पड़ते हैं- धन्य हो महाराज, धन्य हो!"[15]

'दीमक' शीर्षक कहानी में लेखक ने जैनू नामक स्त्री की मनोदशा एवं पीड़ा की अभिव्यक्ति यथार्थ के धरातल पर की है। वह जी-जान से अपने बच्चों, पति, देवर आदि सभी की सेवा-सुश्रुषा करती है, फिर भी उसे पूरी तरह से सुख नहीं मिल पाता, वह पति का पूरा ध्यान रखती है, फिर भी उसका पति उसका पूरा ख्याल न रखकर किसी ओर के प्रति मन लगाये रहता है, जिसका संकेत कहानीकार ने अन्त में दिया भी है। प्रतीक्षारत पत्नी जैनू अपने पति के व्यवहार एवं झूठ से मन ही मन परेशान होकर कहती है- "ब्रिज? क्या वाकई उसके पतिदेव उसे दूध पीती बच्ची समझते थे क्या उनका यह ख्याल था कि वह कुछ नहीं जानती थी?"[16] अर्थात् उसके पति ब्रिज खेलकर नहीं, बल्कि उनके चहकने एवं खुशी से पता चल रहा था कि वे किसी अन्य औरत से प्रेम करते हैं। वस्तुतः विश्वास ही स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध का आधार है और यदि इसमें किसी ओर से कमी आती है, तो सम्बन्धों में तो दरार पड़ती ही है, परिवार भी बिखर जाता है। देखा जाए, तो जिस प्रकार दीमक जिस पर लगती है, उसे पूरी तरह नष्ट कर देती है, उसी प्रकार सम्बन्धों में अविश्वास की स्थिति आने पर परिवार भी पूरी तरह नष्ट हो जाता है। इस कहानी में नारी, जो अपना सारा जीवन परिवार की देखरेख में समर्पित कर अपने सुख-दुःख की तनिक भी चिन्ता नहीं करती, की मनोदशा का वास्तविक चित्र देखने लायक है। समाज में ऐसे पुरुषों की कमी नहीं है, जो ऐसी नारी के साथ भी धोखा करते हैं।

यह कहानी जैनू के रूप में नारी के एक आदर्श पत्नी, एक दायित्वपूर्ण माँ के रूप का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत करती है, परन्तु नारी-जीवन की यह विडम्बना है कि वह इतने पर भी सुख-चैन प्राप्त नहीं कर पाती। नारी की इस दयनीय स्थिति से परिचित कराने में कहानीकार ने जो कथा का ताना-बाना बुना है, वह एकदम सहज एवं स्वाभाविक है। कहानी नारी की भावनाओं एवं इच्छाओं आदि का भी अच्छा दिग्दर्शन कराती है। इसमें लेखक की नारी के प्रति सजग दृष्टि का पता चलता है, तथा कहानी कहने की कला का निखार भी परिलक्षित होता है। आशय यह है कि बलवन्त सिंह केवल आंचलिक कहानीकार मात्र नहीं है, बल्कि एक ऐसे कुशल कहानी-प्रणेता हैं जिन्होंने समाज के प्रति सचेत रहकर समाज की विषय-सामग्री से भी कहानी के कलेवर को सजाने-सँवारने का सफल प्रयास किया है। वे समाज के प्रति पूरी जबाबदेही बनाये रखकर संरचना करने वाले जागरुक सर्जक हैं।

'काली तित्तरी' कहानी का सम्बन्ध डाकुओं के क्रिया-कलापों से है। एक दिन डाकुओं का सरदार बग्गा सिंह, जो पीर दा ठट्ठा गाँव से बीस कोस दूर भँवोड़ी गाँव का रहने वाला है, तथा ठट्ठा वासी कपूरा सिंह, जिस काला तित्तर कहा जाता है, अपने साथियों के साथ योजनाबद्ध तरके से पीर दा ठट्ठा नामक गाँव में डकैती डालने का प्रयास करते हैं, पर उनकी योजना गाँव वालों के जागने से सफल नहीं हो पाती और काला तीतर अर्थात् कपूरा सिंह मारा जाता है। यह कहानी इस तथ्य पर प्रकाश डालती है कि बुरे काम का परिणाम अन्ततः बुरा ही होता है। अतः कभी भी बुरे काम की ओर प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए। यह कहानी कहानीकार बलवन्त सिंह की मानवतावादी सोच को अभिव्यक्ति देती हुई अपने पाठकों की संवेदना को मात्र झकझोरती ही नहीं है, बल्कि उनमें अत्याचार या अन्याय का प्रतिरोध करने

की क्षमता भी जगाती है। कहानी आंचलिकता की दृष्टि से इसलिए उचित है क्योंकि इसमें बीच-बीच में पंजाब के परिवेश को भी यथार्थता के साथ प्रस्तुत किया है और तत्कालीन स्थिति को भी पूरी सच्चाई के साथ प्रस्तुत किया गया है। पंजाब में सिक्ख युवकों के डकैती से सम्बन्धित क्रिया-कलाप आये-दिन होते रहते थे और गाँव वालों को तो अक्सर ऐसे लोगों की यातनाएँ भी सहनी पड़ती और वे उनका डटकर मुकाबला करते थे। वस्तुतः कहानीकार का उद्देश्य पंजाब को इन स्थितियों से उभारकर एक खुशहाल पंजाब का रूप देना रहा है। वह नहीं चाहता कि पंजाब के लोगों को देश या समाज गलत दृष्टि से देखे। यही कारण है कि उसने पंजाब की इस बुराई को भी जड़ से समाप्त करने का संकेत गाँव वालों द्वारा डाकू के अन्त से दिया है।

कहानी में डाकुओं के क्रिया-कलापों, उनके मध्य बातचीत, उनकी योजनाओं आदि को बलवन्त सिंह ने इस प्रकार चित्रित किया है, कि वे यथार्थ एवं वास्तविक लगते हैं। उनके अस्त्र, शस्त्र, सवारी आदि भी तदनुरूप दिखाये गये है। इन सब डकैतों का सम्बन्ध पंजाब से है, इसका भी हू-ब-हू वर्णन करने में लेखक सफल है। यदि यह कहा जाए कि बलवन्त सिंह प्रकृति और वातावरण को कुछ ऐसे आँकते हैं, कि इन दोनों का फैलाव-विस्तार पात्रों को उभारने का संयोग बने[17] तो भी, यह कहानी अपना औचित्य सिद्ध करती है, उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

"लकड़ी के बने हुए भारी-भारी चरखड़ों वाले, रहट के ऊपर छाए हुए फुलाह के पेड़ों के झुंड में से कपूरा सिंह ठट्टेवाला एक आग उगलती थूथनीवाली सिर से पाँव तक काली और मजबूत घोड़ी पर सवार बाहर निकला। उसने पहले पीर का ठट्टा की ओर देखा और फिर दूर-दूर तक फैले हुए खेतों पर निगाह दौड़ाई। किंतु उसकी दृष्टि दूर तक नहीं जा सकी क्योंकि आँधी प्रति क्षण बढ़ती जा रही थी। खेतों की फसलें धूमिल वायु के आगमन से एक बड़े तालाब के मैले गँदले पानी की भाँति हिलौरे लेती दीख रही थी।"[18]

'शर्त' एक छोटी सी कहानी है, जो आधुनिक समय की लघुकथा कही जा सकती है। इस कहानी में प्रमुखतः तीन किरदार हैं एक तो अजमेर सिंह, जिसके पिता के गुजर जाने पर उसका पालन-पोषण उसके चाचा द्वारा किया गया, चाचा किक्कर सिंह और तीसरी है प्रीतम कौर जिससे एक बार कस्बे से लौटते समय एक रहट पर रुकने पर अजमेर की आँखें चार हो गयी थीं। किक्कर सिंह एक बार प्रेम में असफल होने पर स्त्री-जाति का ही वैरी हो गया था और उसके धाकड़ एवं अक्खड़ स्वभाव के कारण अजमेर प्रीतम कौर से अपने प्रेम की बात चाचा से कहने में असमर्थ था, पर एक दिन प्रीतम कौर के कहने से वह प्रीतम कौर के घर में दूर की रिश्तेदार विधवा पर आकर्षित हुए किक्कर सिंह की बात जानकर अपने चाचा से अपनी प्रेम-कथा कहने की हिम्मत जुटाता है और साथ में चाचा की उसी विधवा से शादी के सम्बन्ध में शर्त की बात करता है, जिसे चाचा की स्वीकृति का संकेत मिल जाने पर उसकी एवं चाचा की शादी का मार्ग खुल जाने से दोनों के जीवन में प्रसन्नता आ जाती है।

यह कहानी यह दर्शाती है कि कठोर से कठोर हृदय व्यक्ति के हृदय में भी कोमलता रहती है, जो उचित अवसर आने पर प्रकट हो ही जाती है और वह सब कुछ भूलकर पुनः उसी मार्ग पर बढ़ जाता है, जिस पर परिस्थितिवश धोखा खाने पर वह न चलने के लिए प्रण कर चुका है। किक्कर सिंह इसी व्यक्तित्व का नाम है। वैसे तो अजमेर एवं किक्कर दोनों ही पुरुष ऐसे हैं, जो स्त्री के कोमलता एवं प्रेम के आगे नतमस्तक हो जाने को तत्पर हैं। इस कहानी का शीर्षक कहानीकार ने शर्त सही रखा है, जो इस कहानी का सार रूप भी है। शर्त का स्वरूप अजमेर के शब्दों में ही कहानीकार ने इस प्रकार रखा है- "चाचा, मेरी शादी के लिए उन्होंने एक टेढ़ी शर्त रखी है। वे कहते हैं कि अगर तुम्हारा चाचा किक्कर सिंह उस विधवा से विवाह कर ले, तो हम प्रीतम कौर से तुम्हारी शादी कर देंगे।"[19]

इस प्रकार यह कहानी समाज में व्याप्त विधवा विवाह की समस्या का निराकरण करने की दृष्टि से विचारणीय है, जो कहानीकार की प्रगतिशील विचारधारा को अभिव्यक्ति देती है। कहानी आंचलिकता के परिवेश में ही रची गयी है। वर्णित प्रेम-सम्बन्धों का यह रूप प्रायः पंजाबवासियों में दिखता है। प्रीतम कौर के घर की आवभगत, किक्कर सिंह का स्वभाव एवं वेशभूषा आदि भी क्षेत्र से ही सम्बद्ध रखते हैं। कहानी पंजाब के गाँव की है ही।

'सजा' कहानी का सम्बन्ध पंजाब के एक छोटे गाँव से है, जो एक ऐसी स्त्री (कन्या) की कथा है, जिसके माँ-बाप भी नहीं हैं और एक भाई हैजे से मृत्यु को प्राप्त हो चुका है, बाबा एवं छोटे भाई (छः वर्ष का) चन्नन (चाँद) के साथ कच्चे मकान में रहती है और जानवर पालकर उसका दूध बेचकर किसी तरह अपना खर्च चलाती है। नंबरदार का उस पर कर्ज़ा है, जिसके कारण वह परेशान रहती है। मकान बिकने की नौबत आने पर तारा के दिये हुए रुपयों से उसका मकान बच जाता है। यह कन्या जीतो कौर है, नंबरदार का लड़का फुम्मन सिंह की छेड़खानी से भी वह परेशान है और तारा सिंह, जो लड़कियों को देखकर उन्हें छेड़ता है, गाना गाता है, को भी वह इसी आदत के कारण उससे पहले तो घृणा ही करती है, परन्तु एक बार उसके खेत में चोरी से साग तोड़ते हुए पकड़े जाने पर उससे झगड़ा करती है, बुरा-भला भी कहती है और स्लीपर उतारकर उसके माथे पर प्रहार भी करती है। इतने पर भी उसे उसका व्यवहार मन-ही-मन अच्छा लगता है और मुसीबत पड़ने पर उससे मदद माँगने भी जाती है और यह पता लगने पर कि वह बाबा को रुपये देकर समय पर मदद कर चुका है अर्थात् नंबरदार का कर्ज चुकाया जा चुका है। तारा के व्यवहार से जीतो का दिल इतना प्रभावित हो जाता है कि जब तारा जीतो के जाने पर उसका रास्ता रोक दरवाजे के आगे खड़ा होकर मुस्कुराते हुए कड़े स्वर में यह कहता है- "जीतो! आज फिर मेरी नीयत खराब हो रही है, आज फिर दंड दो,"[20] तब जीतो सजा के रूप में शर्माती हुई अपने जूड़े से चमेली का हार निकाल कर हँसी-खुशी तारा के गले में डाल देती है और उसे वही तारा, जो लड़कियों को देखकर उन्हें छेड़ने के बहाने से गाना गाता है, बहुत अच्छा लगने लगता है।

यह कहानी अनेक दृष्टियों से विचारणीय है। माँ-बाप एवं जिम्मेदार व्यक्ति के न होने पर एक कन्या किस प्रकार अपने दायित्वों का निर्वाह करती है, अर्थाभाव के कारण उसे किन-किन परेशानियों से गुजरना पड़ता है, परन्तु इतने पर भी वह हिम्मत के साथ समाज में रहती है। ऐसे समय पर यदि कोई सच्चा मददगार उसे मिल जाए, तो वह स्वयं को उसे समर्पित करने के लिए तत्पर हो जाती है। क्रोधवश या भूलवश किये गये अपराध पर भी उसे पश्चाताप होता है। जहाँ तक पुरुषों की बात है उसमें से कुछ तो ऐसी स्थिति का नाजायज फायदा उठाते है, जैसे कि नंबरदार और उसका बेटा, परन्तु समाज में तारा सिंह जैसे मददगार एवं हितैषी पुरष भी हैं, जो निःस्वार्थ भाव से मदद करने को सदैव तत्पर रहते हैं। ऐसे लोगों में बाहरी रूप से कुछ खराबियाँ भले ही दिखें, पर दिल के बहुत अच्छे होते हैं। वस्तुतः ऐसे लोग ही समाज में आदर पाते हैं और किसी के प्रेम के हकदार होते हैं। इस प्रकार यह कहानी जहाँ एक कन्या की मनोदशा एवं पीड़ा का यथार्थ अंकन करती है, वहीं उसकी दायित्व-भावना एवं प्रेम-भावना की भी सच्ची अभिव्यक्ति करती है और समाज में सभ्य एवं सच्चे पुरुषों का भी अच्छा दिग्दर्शन कराती है। इस कहानी में आंचलिकता का भी पूर्ण सन्निवेश हुआ है, भाषा, परिवेश आदि सभी क्षेत्र-विशेष के अनुरूप ही हैं। परिवेश का एक चित्र द्रष्टव्य है-

"तारा के कुएँ की इस समय कैसी शोभा थी। उस समय रहट की रूँ-रूँ और पशुओं की घंटियों की टन्-टन् कैसा विचित्र समाँ बाँध रखा था। शिरीह के ऊँचे वृक्ष वायु में झूम रहे थे। हरे-भरे खेत में सफेद घोड़ी घास चर रही

थी, गन्नों के खेत के पास कुत्ते खेल रहे थे। वे कभी-कभी दुम हवा में उठाकर विचित्र ढंग से चलते, कभी गुर्राकर एक-दूसरे पर लपकते और फिर इकट्ठे होकर नए-नए खेल खेलने लगते।"[21]

इसके अतिरिक्त कहानी के प्रारम्भ में गाँव के दृश्य का वर्णन, कबड्डी का खेला जाना, साग के प्रति विशेष रूचि, खेतों में लहलहाती फसल, मेढ़े, पगडंगी, गुरुद्वारे के प्रति श्रद्धा, बरसाती मौसम, हरी-हरी घास की सोंधी सुगन्ध, पलंग, टाट, कृपाण-धारण करना आदि सब कुछ पंजाब की धरती का समग्र चित्र ही यथार्थता से परिपूर्ण प्रतीत कराता है। लोगों के बीच बातचीत का ढंग भी भूमि के अनुरूप है जिससे पाठक कहानी को पढ़कर स्वयं को पंजाब के गाँव में ही भ्रमण करता महसूस करता है। यह तो सर्वविदित है कि पंजाब वीरता की भूमि भी है और प्रेम का महासागर भी। सहायता की भावना तो मानो पंजाबवासियों में कूट-कर भरी हुई है। इन सबसे कहानी पूरी तरह से अंचल-विशेष से सम्बद्ध प्रतीत होती है। कहानी की ये पंक्तियाँ भी इस दृष्टि से अवलोकनीय हैं-

> निक्का घड़ा चक लछिए!
> तेरे लक नू जख न आवें,
> निक्का घड़ा चक लछिए।[22]

'जग्गा' कहानी का नायक जग्गा ही है, जिसका असली नाम तो सरदार जगत सिंह है, पर वह जग्गा डाकू के नाम से मशहूर था। पेशे से तो वह हत्यारा, लुटेरा, खूँखार एवं भयंकर आकृति एवं क्रूर स्वभाव वाला है, परन्तु वह केवल धनवानों या बड़ी तोंद वालों अर्थात् लाला लोगों को लूटता था और दीन-हीनों एवं गरीबों की मदद करता था। एक रात वह उस घर में आकर ठहरता था, जहाँ गुरनाम कौर से उसकी भेट होती है, वह उसके सौन्दर्य एवं स्वभाव से प्रभावित होकर उसके प्रति इतना आकर्षित हो जाता है कि प्रायः उसके यहाँ ठहरता है, बिना गुरनाम के बताये वह उसके पिता को इसके लिए राजी भी कर लेता है, परन्तु जब उसे यह पता चलता है कि गुरनाम की शादी दिलीप सिंह से होने वाली है, तो वह दिलीप सिंह से खूनी पुल पर झगड़ा कर और परीक्षा लेकर उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उसे मरणासन्न जैसी स्थिति में अपने कन्धे पर लादकर गुरनाम के घर ले आता है और उससे उसकी शादी करा देता है और जमीन एवं रुपया देने को तत्पर रहता है। यही उसकी उदारता है, वह चाहता तो स्वयं ही गुरनाम से शादी कर सकता था, परन्तु वह जानता था कि गुरनाम उसे चाहती तो है, पर प्रेम नहीं करती। अब उसने उसकी इच्छा का पूरा ख़याल रखते हुए उक्त कदम उठाया। उसने गुरनाम को कभी यह एहसास नहीं होने दिया कि वह एक डाकू है, विवाह के बाद भी वह डाकू के रूप में गुरनाम के गाँव से गुजरा, पर गुरनाम के पहचान लिये जाने पर भी गुरनाम के बाबा ने अपनी पोती को उसके डाकू होने का एहसास नहीं होने दिया। प्रायः ऐसा देखने में आता है कि डाकू स्त्रियों एवं कन्याओं के साथ भी दुर्व्यवहार करते हैं, परन्तु जग्गा उदार प्रकृति का डाकू था और दीन-हीनों एवं गरीबों का मददगार भी था।

इस मुख्य कहानी में कहानीकार ने गुरनाम कौर के असाधारण सौन्दर्य, पंजाब के नवयुवकों का उसके प्रति आकर्षण, उसको पाने के लिए श्रृंगारा सिंह एवं दिलीप सिंह में संघर्ष आदि के साथ-साथ पंजाब के गाँव भीकन के परिदृश्य तथा वहाँ के निवासियों के स्वभाव, खान-पान, व्यक्तित्व, बोलचाल, व्यवहार, वेश-भूषा आदि का भी अंकन अत्यन्त स्वाभाविकता एवं यथार्थता के आधार पर किया है, जिससे अंचल-विशेष का रूप साकार हो जाने से कहानी में आंचलिकता का पूर्ण सन्निवेश परिलक्षित हो गया है। परिवेश की दृष्टि से इस कहानी में अनेक स्थल हैं तथा दो गीतों का संयोजन भी पंजाब का रूप सामने लाने में अत्यधिक उपयुक्त है। गुरनाम कौर का पहनावा, सिक्ख युवकों, खासकर जग्गा का

व्यक्तित्व एवं पहनावा तो पंजाब की भूमि के अनुरूप ही है। कपास की खेती, शलजम की तरकारी, शक्कर और घी, डेलों का अचार आदि भी पंजाब के गाँव की याद दिलाते हैं। परिवेश का यह रूप भी इस दृष्टि से अवलोकनीय है- "ड्योढी से निकलकर अजनवी सेहन में दाखिल हो गया। एक बच्चा छाती से गुल्ली-डंडा चिपकाए सो रहा था। सेहन पशुओं के मल-मूत्र से अटा पड़ा था, एक ओर नाँद के पास भैंस खड़ी जुगाली कर रही थी। भूसे और खली की सानी की गंध चारों ओर फैली हुई थी। रस्सी पर मैले-कुचैले कपड़े लटक रहे थे। एक ओर खरास (बैलों से चलने वाली चक्की), दूसरी ओर तंदूर और पास ही दीवार से टिका हुआ छकड़े का पहिया, बड़े-बड़े उपले, कोने में कपास की छडियाँ, चूल्हे के पास झूठे बर्तनों का ढेर। एक कमरे में सफेद-सफेद चमकते हुए बर्तन दिखाई दे रहे थे। साथ ही तागे मे पिरोए हुए शलजम के टुकड़े सूखने के लिए लटक रहे थे।"[23]

इन कहानियों के आलोक में कहानीकार बलवन्त सिंह को एक उत्कृष्ट कथा-सर्जक के रूप में प्रतिष्ठित करने में किसी भी हिन्दी कथा-प्रेमी को आपत्ति नहीं होगी चूँकि उनकी ये कहानियाँ कथ्य एवं शिल्प दोनों ही दृष्टियों से अपना विशिष्ट महत्त्व रखती हैं। वे एक सहज कहानी लेखक के रूप में कहानी की सर्जना करते है। कृष्णा सोबती ने उचित ही कहा है- "कथ्य और शैली का कोई अतिरिक्त आग्रह न होते हुए भी बलवंत सिंह ज्यामिति कोण से कहानी को उठाकर जिस मितव्ययिता से गूँथते हैं वह अपनी बनावट और बुनावट में एक मुकम्मल सफ़र का गतिवान अनुभव प्रस्तुत करता है। चुस्त-दुरस्त भाषा के संवाद की रवानगी कहानी के कहानीपन को बदस्तूर अपनी जगह पर रखे रहती है। उसमें कोई ख़लल पैदा करने की छूट बलवन्त सिंह न अपने को और न कहानी को देते हैं।"[24] कहानी की अच्छी पकड़ रखने वाले उन्होंने अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा से उर्दू गल्प को जितनी ऊँचाईयों पर पहुँचाया, उससे अधिक हिन्दी-कहानी को एक नयी पहचान देकर उसे उत्कृष्ट रूप प्रदान किया है। यही कारण है कि उनके द्वारा विरचित कहानियाँ समग्र कहानी-जगत में अपनी श्रेष्ठ स्थिति से पृथक् से पहचानी जाती हैं। उन्होंने साधारण से साधारण जन को भी अपनी कहानी के केन्द्र में रखकर पूरी सच्चाई एवं ईमानदारी के साथ पाठकों से रू-ब-रू कराने का प्रयास किया है, जिससे वर्णित विषय पाठकों को सहज ही बोधगम्य हो जाता है। पंजाब से विशेष सम्बन्ध रखने वाले वे उस भूमि के चप्पे-चप्पे एवं व्यक्ति से परिचित हैं और उसे स्वानुभूति एवं संवेदना से आत्मसात् करके जब कहानी-रचना करते हैं, तो वह कहानी यथार्थ का साकार रूप ही प्रतीत होती है। उनकी कहानियों में पंजाब प्रान्त इस तरह प्रतिबिम्बित हो जाता है कि सम्पूर्ण कहानी उसी में परिवेष्टित प्रतीत होती है। प्रकृति परिवेश, पात्र एवं उनके आचार-व्यवहार एवं क्रिया-कलाप आदि सभी कुछ कहानी में इस प्रकार ओतप्रोत हैं कि कहानी सहज ही अपनी सत्ता का एहसास कराती हुई अपने पाठक को पंजाब से सम्पृक्त कर देती है। कृष्णा सोबती का यह कथन इन कहानियों के सन्दर्भ में तो पूर्णतः उचित प्रतीत होता है- खेतों की मुँडेरों पर दीखते बबूल, कीकर, कच्चे घरों से उठता धुँआ, रात के सुनसान में सरपट भागते घोड़े, छवियाँ, लशकाते डाकू, घरों से पेटियाँ धकेलते चोर, कनखियों से एक दूसरे को रिझाते जवान मर्द और औरतें, भोले-भाले बच्चे, लम्बे सफर समेटते डाची सवार- समय और स्थितियों से सीनाजोरी करते बलवन्त सिंह के पात्र पाठक को देसी दिलचस्पियों से घेरे रहते हैं। कुछ कर गुज़रने के लिए जिस साहस की जरूरत इन्हें है, उसे कलात्मक ऊर्जा से मंजिल तक पहुँचाने का फ़न लेखक के पास मौजूद है।"[25] इन सब से समावेष्टित कहानियाँ आंचलिकता की परिधि में ही विचारणीय है। इतना अवश्य है कि भाषा-संरचना में कहानीकार ने उर्दू शब्दावली के प्रयोग के प्रति झुकाव बनाए रखा है, परन्तु ये शब्द ऐसे हैं जो हिन्दी के

सहज प्रयोग का ही अंग हैं, जो सहजता से ही हृदयंगम भी हो जाते हैं। देखा जाए, तो उनकी इस भाषा-संरचना को महात्मा गान्धी द्वारा कथित हिन्दुस्तानी हिन्दी ही कहा जाएगा। क्षेत्रीय प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी यत्र-तत्र किया गया है, परन्तु भाषा में अनगढ़ता एवं अग्राह्यता नहीं है।

अतः संकलन की ' दीमक', 'कुछ क्षण' एवं 'शहनाज' कहानी को छोड़कर अन्य सभी कहानियाँ आंचलिक कहानी की श्रेणी में रखी जानी उचित है। उक्त तीनों कहानियों में भी प्रेम की सरिता का ऐसा प्रवाह है कि लेखक की अभिव्यक्ति को पंजाब की प्रेममयी भूमि से सम्बद्ध कर देती है। 'कुछ क्षण' तो आजादी के समय के हिन्दू-मुस्लिम दंगे का स्मरण दिलाती हुई पंजाब के उस दर्द का स्मरण दिला देती हैं। जिसका सर्वाधिक यातनामय कष्ट पंजाबवासियों ने ही सहा है। इस प्रकार बलवन्त सिंह की अधिकांश हिन्दी कहानियाँ पंजाब को लेकर ही लिखी गयी है और वे इस क्षेत्र में अद्‌वितीय कहानीकार है, जिसका उल्लेख डॉ. सुरेश सिन्हा ने इस प्रकार किया है- "वे पंजाब में अपने जीवन का काफी भाग बिता चुके है। वहाँ की मिट्टी-मिट्टी की सुवास उनके मन में बसी हुई है। मुझे तो ऐसा लगता है कि पंजाब से हिन्दी में आने वाले सभी लेखकों में पंजाब की आत्मा का जितनी निकटता से अनुभव बलवन्त सिंह ने किया है, उतना किसी अन्य लेखक ने नहीं। और यही कारण है कि उनकी कहानियों में चित्रित पंजाब का जीवन आरोपित या कृत्रिम नहीं होता, और न ही उसमें कहीं अयथार्थता परिलक्षित होती है।"[26]

निष्कर्ष

वस्तुतः वे ऐसे आंचलिक कहानीकार हैं, जिनकी कहानियों में आचंलिकता सहज रूप से समाविष्ट है और उन्हें एक कुशल आंचलिक कहानी-प्रणेता की श्रेणी में प्रतिष्ठित किया जाना पूर्णतः न्यायोचित है। उनकी कहानियाँ पाठकों को जीवन की सच्चाई से रू-ब-रू कराती हुई रोमांस एवं प्रेम का भी आस्वाद देती हैं, जिससे उनकी लोकप्रियता भी काफी हद तक बढ़ गयी है। साथ ही, उनमें कलात्मकता भी उच्च कोटि की है, जो कहानी-सर्जकों के लिए मार्ग-दर्शन करती हुई अपनी विशिष्टता से पृथक् पहचान बनाये हुए है।

इस सन्दर्भ में प्रख्यात महिला कहानीकार कृष्णा सोबती के विचार अवलोकनीय हैं- "सर्जक के रूप में कहानी के रोमान और जिंदगी की हकीक़त को एक-दूसरे में लीन कर नई गूँज पैदा करने वाले कहानीकार आज भी बलवन्त सिंह से कुछ सीख सकते हैं। अकारण नहीं, इन्हीं विशेषताओं के बल पर वह अपने समकालीनों में विशेष माने जाते रहे हैं। वे न सामाजिक कथ्य से आक्रान्त हैं, न शैलीगत दबाब से आतंकित हैं- फिर अपनी सजग चौकन्नी निगाह में अक्सर चूकते नहीं। उनकी शिल्पगत क्षमता और संवेदन सामर्थ्य द्‌वन्द्‌वात्मक रफ़्तार में अभिव्यक्त होती है।"[27] वस्तुतः पाठकों, सर्जकों एवं समीक्षकों में आदरणीय कहानीकार बलवन्त सिंह कहानी जगत् के ऐसे सशक्त हस्ताक्षर हैं, जिनकी गणना विश्व स्तर के कहानीकारों में की जानी चाहिए चूँकि उन्होंने अपनी अद्भुत रचनात्मक क्षमता से उर्दू एवं हिन्दी कहानी को उत्कृष्ट रूप दिया है। वे दोनों ही भाषाओं के अग्रणी कहानीकार हैं। उन्होंने उर्दू से हिन्दी में आकर हिन्दी-कहानी को भी पूरी तत्परता से सजाते-सँवारते हुए जिन आयामों पर पँहुचाया है, उसे समझने के लिए उनके द्‌वारा विरचित कहानियों को उनकी पूर्ण कलात्मकता के साथ पाठकों एवं समीक्षकों को पठन-पाठन का अंग बनाना अपरिहार्य है। सम्भवतः उन जैसा कहानी-सर्जक, जिसने अपने समय एवं समाज के प्रति सजग होकर ही कहानियाँ नहीं लिखीं, बल्कि क्षेत्र-विशेष (पंजाब) की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करने में भी अग्रणी भूमिका का निर्वाह किया, सम्पूर्ण कहानी-जगत में ही दुर्लभ है। गुण-दोष तो रचना में होते ही हैं, पर कहानी कहने में रचनाकार पूर्णतः सिद्धहस्त है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. साहित्यिक निबन्धः सम्पादक डॉ. त्रिभुवन सिंह पृष्ठ 346 द्वितीय संशोधित संस्करण- 1976
2. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहासः डॉ. बच्चन सिंह, पृष्ठ 399 लोकभारती प्रकाशन, 15-ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, प्रथम संस्करण- 1975
3. हिन्दी साहित्यः डॉ. लक्ष्मण सिंह विष्ट 'बटरोही', पृष्ठ 187 उपयोगी प्रकाशन, रुद्रपुर (नैनीताल), प्रथम संस्करण 1975
4. साभार उद्धृतः कहानी कुसुमः डॉ. कौशल नन्दन गोस्वामी (भूमिका- पृष्ठ xii) कुमार प्रकाशन, दुर्गा मार्केट, दर्जी चौक, बरेली प्रथम संस्करण- 1994
5. नई कहानी की मूल संवेदनाः डॉ. सुरेश सिन्हा पृष्ठ- 91 भारतीय ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली-6,1966
6. वही, पृष्ठ 92
7. विकिपीडिया
8. ग्रन्थी, पृष्ठ 23 (प्रतिनिधि कहानियाः बलवन्त सिंह- संपादन कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली- 110002, दूसरी आवृत्ति- 2014
9. पहला पत्थर- पृष्ठ 56
10. पहला पत्थर- पृष्ठ 55
11. तीन बातें, पृष्ठ 71
12. तीन बातें, पृष्ठ 76
13. नई कहानी की भूमिकाः डॉ. सुरेश सिन्हा, पृष्ठ 92
14. सूरमा सिंह, पृष्ठ 93
15. वही, पृष्ठ 83
16. दीमक, पृष्ठ 120
17. प्रतिनिधि कहानियाँ: बलवन्त सिंह (भूमिका- कृष्णा सोबती) पृष्ठ 05
18. काली तित्तरी, पृष्ठ 133
19. शर्त- पृष्ठ 152
20. सज़ा- पृष्ठ 164
21. सज़ा- पृष्ठ 161
22. सज़ा- पृष्ठ 155 एवं पृष्ठ 165
23. जग्गा- पृष्ठ 170
24. प्रतिनिधि कहानियाँ: बलवन्त सिंह- संपादन कृष्णा सोबती, भूमिका, पृष्ठ 5
25. वही, पृष्ठ 6
26. नई कहानी की मूल संवेदनाः डॉ. सुरेश सिन्हा पृष्ठ- 91
27. प्रतिनिधि कहानियाँ: बलवन्त सिंह- संपादन कृष्णा सोबती, पृष्ठ 6